



THE TIMES OF INDIA

Date: 15-05-25

Ready To Rock

India had a diamond monopoly in ancient times, lab-grown diamonds can restore it

TOI Editorials

Blue diamonds, which are rarer than blue moons, made headlines twice in the past three weeks. First, when Christie's cancelled the auction of 'Golconda Blue' in April, and again on Tuesday when Sotheby's sold 'Mediterranean Blue' for \$21.5mn in 2.5 minutes. Of the two, GB was the real deal. Mined in India, it had belonged to the Maharaja of Indore once, and was expected to fetch up to \$50mn. Not because it was a fistful-23ct is less than 5g; Ranjit Singh's Kohinoor weighed 191ct - but because it was the biggest blue diamond ever on the market. South Africa-mined MB, on the other hand, weighs a less atypical 10.3ct or 2g.

All diamonds are special, but blue ones more so because they are born 600km under your feet, where temperature and pressure are so high it's like being in the middle of a nuclear explosion. Actually, nuclear explosions have been known to form 'nanodiamonds', but they're not worth the risk. As for the blue colour, it comes from traces of boron - the same chemical that an Egyptian plane was rumoured to have brought to Kirana Hills after the rumoured nuclear leak at its rumoured nuke silo after arumoured Indian strike last Saturday.

What's not rumoured but certain is that the future of diamonds lies in labs, not underground. Although manmade diamonds have been around since the 1950s, Modi's gift of a 7.5ct lab-grown green diamond to the Bidens two years ago declared India's intent of causing a major upset in the market. Nine of every 10 diamonds are polished in India. Eight of every 10 diamond traders in Antwerp, Belgium - global hub of diamond trade - are Gujaratis. What we don't have anymore - despite a monopoly till the 1830s - is enough diamond mining. But lab-grown diamonds, which are indistinguishable from Kohinoor and Golconda Blue without deep chemical analysis, and far cheaper, can fill that gap. Diamond snobs might still demand the "real" thing, but don't bet on it because manmade diamonds, with their relatively tiny carbon footprint, may be more flaunt-able. Besides, they'll be available in any colour you want, even if it's black.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 15-05-25

लंबित मामलों पर ध्यान जरूरी

संपादकीय



न्यायमूर्ति भूषण रामकृष्ण गवई ने देश के 52वें मुख्य न्यायाधीश के रूप में शपथ ग्रहण कर ली है। यह अवसर बताता है कि कैसे अवसरों तक समान पहुंच देश में सामाजिक समावेशन की राह को आसान कर सकती है। न्यायमूर्ति के जी बालकृष्णन के बाद न्यायमूर्ति गवई दूसरे दलित हैं जो सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश बने हैं। सन 1950 में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना के बाद केवल सात दलित ही वहां न्यायाधीश बन सके हैं जिनमें से गवई भी एक हैं। यह बात बताती है कि भारत को वास्तविक सामाजिक समानता के क्षेत्र में अभी कितना लंबा सफर तय करना है। न्यायमूर्ति गवई अपने करियर के

आरंभिक दिनों में कई बाधाओं से दोचार हुए। संविधान के अनुच्छेद 124 (3) के तहत सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीश बनने की अर्हता हासिल करने के लिए किसी व्यक्ति को कम से कम पांच वर्ष तक उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहिए या फिर उसे कम से कम 10 वर्ष तक उच्च न्यायालय में अधिवक्ता के रूप में काम करने का अनुभव होना चाहिए। न्यायमूर्ति गवई ने 16 वर्षों तक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में काम किया जिसके बाद मई 2019 में उन्हें सर्वोच्च न्यायालय में नियुक्ति मिली। जैसा कि उन्होंने अपनी नियुक्ति के बाद खुलकर स्वीकार किया, चूंकि सरकार पीठ में विविधता सुनिश्चित करना चाहती थी इसलिए सर्वोच्च न्यायालय में उनकी नियुक्ति की प्रक्रिया को दो वर्षों तक तेज किया गया।

न्यायमूर्ति गवई सर्वोच्च न्यायालय के कई अहम फैसलों का हिस्सा रहे हैं। इनमें कुछ प्रमुख निर्णय रहे हैं: जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्जा समाप्त करना, नोटबंदी, राज्यों को आरक्षण के लिए अनुसूचित जातियों के भीतर उपश्रेणियां तैयार करने की इजाजत देना और चुनावी फंडिंग के लिए चुनावी बॉन्ड योजना को निरस्त करना। अब जबकि वह देश के मुख्य न्यायाधीश बन गए हैं तो उनके सामने वक्फ (संशोधन) अधिनियम, 2025 की वैधता जैसे कहीं अधिक संवेदनशील मामले आएंगे। अपने पूर्ववर्ती न्यायमूर्ति संजीव खन्ना की तरह उनके पास भी शीर्ष पर रहने के लिए केवल छह माह की अवधि होगी यानी नवंबर 2025 तक वह देश के मुख्य न्यायाधीश रहेंगे। हालांकि इतना समय सर्वोच्च न्यायालय में आवश्यक गहन संस्थागत सुधारों के लिए अपर्याप्त है लेकिन उनके सामने अपने पूर्ववर्ती मुख्य न्यायाधीश का कार्यकाल एक आदर्श की तरह उपस्थित है। न्यायमूर्ति खन्ना ने न्यायाधीशों की नियुक्ति की कॉलेजियम प्रक्रिया के जटिल मुद्दे को हल करने के लिए एक प्रणाली पेश की जिसके तहत उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद पर चयनित अभ्यर्थियों से मुलाकात और उनका साक्षात्कार करने की व्यवस्था है। इस उपाय ने उस चयन प्रक्रिया में ईमानदारी का एक और आयाम जोड़ दिया जो वर्षों से कार्यपालिका के निशाने पर थी। उनके द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में कार्यरत न्यायाधीशों द्वारा संपत्ति का खुलासा

आवश्यक किए जाने ने भी उस संस्थान की प्रतिष्ठा को मजबूत किया जो पिछले कुछ साल से विश्वसनीयता के संकट से जूझ रहा था।

अपने नपेतुले अंदाज और व्यावहारिक रुख के बावजूद न्यायमूर्ति खन्ना अपने उत्तराधिकारी के लिए लंबित मामलों का एक जटिल मुद्दा छोड़ गए हैं। सर्वोच्च न्यायालय के आंकड़ों के अनुसार लॉबित मामले एक जटिल मुद्दा बने हुए हैं। न्यायमूर्ति खन्ना द्वारा पुराने और लंबित मामलों को चिह्नित करने तथा आपराधिक मामलों के निपटान की दर को 100 फीसदी से अधिक बढ़ाकर मोटर दुर्घटना दावा मामलों में आधे से अधिक का निपटारा करके कार्य सूची को सरल बनाने के सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद लंबित मामलों की संख्या अभी भी 80,000 से अधिक है।

इसका मुख्य कारण यह है कि जिस गति से नए मामले शुरू हो रहे हैं वह निपटाए जा रहे मामलों से अधिक है। संविधान पीठ के सामने भी बहुत अधिक मामले हैं। करीब 20 मुख्य मामलों और 293 संबद्ध मामले पांच न्यायाधीशों वाले पीठ के समक्ष ही लंबित हैं। हालांकि उनका कार्यकाल छोटा है लेकिन न्यायमूर्ति गवई ने अपने पूर्ववर्ती की तरह ही कहा है कि वह सेवानिवृत्ति के बाद कोई सरकारी पद नहीं लेंगे। उच्च न्यायपालिका में सार्वजनिक भरोसा बहाल करने की दिशा में यह अहम कदम है।

जनसत्ता

Date: 15-05-25

समानता का सवाल

संपादकीय



सेना में स्त्री-पुरुष समानता सुनिश्चित करने में भारत की प्रगति धीमी रही है। बावजूद इसके, महिलाएं तमाम चुनौतियों को पार करते हुए सेना के तीनों अंगों में अपनी जगह बना रही हैं और धीरे-धीरे अग्रणी भूमिका में भी दिखने लगी हैं। मगर यह संख्या अब भी संतोषजनक नहीं है। पुरुषों के मुकाबले जिस अनुपात में महिलाओं को सेना में अवसर मिलना चाहिए, उस पर प्रायः सवाल उठते रहे हैं। कोई दोराय नहीं कि जब जीवन के हर क्षेत्र में महिलाएं पुरुषों के कंधे से कंधा मिला कर चल रही हैं, तो सैन्य बलों में उनकी प्रतिभागिता पर्याप्त रूप से क्यों नहीं बढ़ाई जानी चाहिए ? अभी सेना में महिलाओं की उपस्थिति कोई बहुत

उत्साहवर्धक नहीं है। शीर्ष न्यायालय ने उचित ही सवाल किया है कि जब महिलाएं रफाल उड़ा सकती हैं, तो सेना की कानूनी शाखा में उनकी संख्या सीमित क्यों है। वे शीर्ष पदों पर क्यों नहीं नियुक्त हो सकतीं। स्थायी कमीशन के लिए भी सेना में कार्यरत महिलाओं को लंबा संघर्ष करना पड़ा था। अपने अधिकारों के लिए उन्हें कानूनी लड़ाई लड़नी पड़ी थी। तब शीर्ष न्यायालय के एक महत्वपूर्ण फैसले के बाद सेना में उच्च पद पर उनके पहुंचने का रास्ता खुला था।

स्त्री-पुरुष समानता के सवाल पर अदालतें सरकार को अपनी मानसिकता बदलने की नसीहत देती रही हैं। महिलाओं को स्थायी कमीशन देने का फैसला सुनाते समय भी जब अदालत ने सरकार को टोका था, तो उसका कहना था कि रक्षा बलों में पुरुष अभी महिला अधिकारियों की कमान स्वीकार करने के लिए मानसिक रूप से प्रशिक्षित नहीं हो पाए हैं। मगर अब तो अग्रिम मोर्चे में महिलाएं कई अहम भूमिकाएं निभाने लगी हैं। सीमित संख्या में ही सही, अगर महिलाएं युद्धक विमान उड़ाने के बिल हो गई हैं, तो क्या पुरुष वर्चस्व की मानसिकता नहीं बदलनी चाहिए। सेना की विभिन्न शाखाओं में महिलाओं की संख्या बढ़ाने के साथ उन्हें युद्ध क्षेत्र में क्यों नहीं तैनात किया जाना चाहिए। आज सेना की सभी चिकित्सा सेवाओं का नेतृत्व महिलाएं ही कर रही हैं। इस पर गंभीरता से विचार होना चाहिए कि बाकी सेवाओं में भी अग्रणी भूमिका से उन्हें क्यों वंचित रखा जाए।

बांग्लादेश में बदतर होते हालात और हमारी सुरक्षा चिंताएं

संजय के भारद्वाज, (प्रोफेसर जेएनयू)

मोहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली बांग्लादेश की कार्यवाहक सरकार अपने एक और विवादास्पद निर्णय के कारण सुर्खियों में है। उसने उस अवामी लीग पर प्रतिबंध लगा दिया है, जो दशकों तक सत्ता में थी। जाहिर है, बांग्लादेश के लोकतंत्र की दरारें काफी चौड़ी हो चुकी हैं। ऐसे फैसले महज पार्टी पॉलिटिक्स तक नहीं सिमटे रहेंगे, बल्कि उन मूल्यों और मान्यताओं को भी प्रभावित करेंगे, जिनके तहत एक लोकतांत्रिक बांग्लादेश का जन्म हुआ था। जन प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 90-बी के तहत अवामी लीग की मान्यता निलंबित की गई है। कार्यवाहक सरकार के मुताबिक, यह राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ा मसला है और आतंकवाद विरोधी कानून के तहत किया गया है। उल्लेखनीय है, अवामी लीग जहां लोकतांत्रिक मूल्यों पर गठित दल है, वहीं अन्य दल या तो सैनिक शासकों द्वारा बनाए गए हैं या संकुचित धार्मिक मूल्यों पर आधारित हैं।

बहरहाल, यह फैसला कई पहलुओं को समेटे हुए है। पहला, इससे चुनावी प्रतिस्पर्धा खत्म हो सकती है और अवामी लीग के समर्थक चुनाव से छिटक सकते हैं। यानी, यह कदम संविधान में अपेक्षित 1971 की भावना को कमजोर करने वाला है। दूसरा, यह माना जा रहा है। कि यदि देश में निष्पक्ष चुनाव होते हैं, तो अवामी लीग के खिलाफ बना माहौल बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी (बीएनपी) के पक्ष में जा सकता है। लिहाजा, जमायत-ए-इस्लामी और अन्य कट्टरपंथी पार्टियां अवामी लीग के बिना चुनाव मैदान में उतरना चाहती हैं, ताकि बीएनपी- विरोधी वोटर उनके पाले में आ सकें और चुनाव बाद वे मोल-भाव की हैसियत पा सकें।

तीसरा पहलू, इस कवायद से नेशनल सिटीजन पार्टी (एनसीपी) जैसे उदार दलों को दबाने की मंशा भी दिखती है। यह पार्टी 2024 में उभरी है, बिल्कुल वैसे ही, जैसे कभी दिल्ली में आम आदमी पार्टी का उदय हुआ था। भ्रष्टाचार, कम किए गए डिजिटल अधिकार और महंगाई जैसे घरेलू मसलों हुए विरोध-प्रदर्शनों से यह पार्टी खड़ी हुई है और लोकप्रियता बटोरने के प्रयास कर रही है, और चौथा कार्यवाहक सरकार अवामी लीग के खिलाफ अब अधिक सख्त रुख दिखाना चाहती है। पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल हमीद जिस तरह देश छोड़कर थाईलैंड भागे हैं, वह एक संकेत है कि अवामी लीग के बड़े नेताओं पर दबिश बढ़ा दी गई है और उन्हें नागरिक अधिकारों से वंचित रखते हुए या तो कानूनी शिकंजे में कसा जा रहा है या देश छोड़ने के लिए मजबूर किया जा रहा है।

हालांकि, ऐसा कुछ करते हुए यूनूस सरकार को समझना चाहिए कि लोकतंत्र का मतलब सिर्फ चुनाव नहीं, बल्कि समावेशी प्रतिनिधित्व होता है। अगर विरोध और विविधता का गला घोंटा जाएगा, तो लोकतंत्र भी जीवित नहीं बचेगा। लिहाजा ताजा कार्रवाई बांग्लादेश में लोकतांत्रिक मानदंडों और मूल्यों में गिरावट का संकेत है। सवाल है कि भारत का रुख क्या होगा ? निस्संदेह, बांग्लादेश की लोकतांत्रिक ताकतों से हमारा अच्छा रिश्ता रहा है और समग्र व समावेशी विकास की आकांक्षी पार्टियों का हम साथ देते रहे हैं। मगर मौजूदा सरकार पर कट्टरपंथियों का दबदबा बढ़ रहा है और यदि ये ताकतें मजबूत होती गईं, तो वहां राजनीतिक अस्थिरता बढ़ सकती है। इससे बांग्लादेश के बुनियादी मूल्यों पर भी खतरा बढ़ जाएगा। हमारे लिए दिक्कत यह भी है कि वहां की सियासी उठा-पटक शरणार्थियों की आमद बढ़ा सकती है और अल्पसंख्यकों का दमन भी । इतना ही नहीं, वहां की कट्टरपंथी सोच पूर्वोत्तर भारत के राज्यों व दक्षिण एशिया के उत्तर-पूर्व हिस्सों की अलगावादी ताकतों को खाद-पानी देने का काम करती है। ऐसे में, हमें दबाव बढ़ाना होगा कि वहां लोकतांत्रिक तरीके से चुनाव हों ।

हम किसी भी देश के अंदरूनी मामले में दखल नहीं देते, लेकिन उम्मीद यही करते हैं कि वहां ऐसी हुकूमत सत्ता में हो, जो अपने मुल्क की बेहतरी के साथ-साथ क्षेत्रीय सुरक्षा व स्थिरता पर जोर दे । फिलहाल, ढाका की कार्यवाहक सरकार दमनकारी और अलोकतांत्रिक रुख दिखा रही है। ऐसे में, अच्छा यही होगा कि कूटनीतिक तरीके से बांग्लादेश में लोकतंत्र की बहाली के प्रयास किए जाएं। भारत ने उचित ही अवामी लीग पर प्रतिबंध के फैसले पर चिंता जताते हुए जल्द ही स्वतंत्र, निष्पक्ष और समावेशी चुनाव कराने की मांग की है।